RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal (RHIMRJ)
Research Paper

# केंद्र-राज्य संबंधों के संदर्भ में राज्य स्वायत्तता की चुनौतियाँ और संभावनाएँ

Dr. Suman Kujur

Assistant Professor, Department of Political Science, B.S College, Lohardaga, Ranchi University, Ranchi

**Abstract**
यह अध्ययन भारत में केंद्र-राज्य संबंधों के संदर्भ में राज्य स्वायत्तता की चुनौतियों और संभावनाओं का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। भारत की संघीय व्यवस्था संविधान द्वारा निर्धारित शक्तियों के विभाजन पर आधारित है, जिसमें केंद्र और राज्यों के बीच विधायी, प्रशासनिक और वित्तीय संबंधों की स्पष्ट संरचना बनाई गई है। राज्य स्वायत्तता का तात्पर्य राज्यों की उस क्षमता से है जिसके माध्यम से वे अपने प्रशासनिक, आर्थिक और सामाजिक मामलों में स्वतंत्र रूप से नीतियाँ बना सकें और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार विकास को दिशा दे सकें। अध्ययन में यह पाया गया कि व्यवहारिक स्तर पर कई कारक राज्य स्वायत्तता को प्रभावित करते हैं, जैसे राजकोषीय निर्भरता, राज्यपाल की भूमिका, अनुच्छेद 356 का संभावित दुरुपयोग, केंद्रीय एजेंसियों की सक्रियता, अखिल भारतीय सेवाओं का नियंत्रण तथा योजनाओं का केंद्रीकरण। इन चुनौतियों के बावजूद सहकारी संघवाद, जीएसटी परिषद, नीति आयोग, वित्त आयोग की सिफारिशें, क्षेत्रीय दलों की बढ़ती भूमिका और प्रतिस्पर्धी संघवाद जैसी प्रवृत्तियाँ राज्यों की स्वायत्तता को मजबूत करने की दिशा में महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करती हैं।

**Keywords**: केंद्र-राज्य संबंध, राज्य स्वायत्तता, सहकारी संघवाद, राजकोषीय संघवाद, संघीय व्यवस्था, नीति आयोग, जीएसटी परिषद

## प्रस्तावना

केंद्र–राज्य संबंध किसी भी संघीय व्यवस्था की आधारभूत संरचना होते हैं और भारत जैसे विशाल, बहुभाषी तथा बहुसांस्कृतिक देश में इन संबंधों का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। भारतीय संविधान ने शक्तियों के स्पष्ट विभाजन के माध्यम से एक मजबूत संघीय ढाँचा स्थापित किया है, जो मूलतः सहकारी संघवाद की अवधारणा पर आधारित है। इस व्यवस्था में राज्य स्वायत्तता का अर्थ यह है कि राज्यों को अपने प्रशासनिक, विधायी और वित्तीय कार्यों में अनावश्यक केंद्रीय हस्तक्षेप से मुक्त होकर क्षेत्रीय आवश्यकताओं, भाषाई–सांस्कृतिक पहचान और स्थानीय विकास की प्राथमिकताओं के अनुसार नीतियाँ बनाने का अधिकार प्राप्त हो। किंतु व्यवहार में इस संतुलन को बनाए रखना कई बार चुनौतीपूर्ण सिद्ध होता है। राज्यों की वित्तीय निर्भरता, राज्यपाल की भूमिका, अनुच्छेद 356 के संभावित दुरुपयोग, समवर्ती सूची के विषयों पर विधायी टकराव तथा केंद्रीय एजेंसियों की बढ़ती सक्रियता जैसे मुद्दे राज्य स्वायत्तता के सामने प्रमुख चुनौतियाँ प्रस्तुत करते हैं। इसके साथ ही कुछ सकारात्मक संभावनाएँ भी उभरकर सामने आई हैं, जैसे नीति आयोग के माध्यम से राज्यों की नीति–निर्माण में बढ़ती भागीदारी, जीएसटी परिषद के जरिए वित्तीय निर्णयों में साझा भूमिका, तथा राष्ट्रीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों का बढ़ता प्रभाव।

## राज्य स्वायत्तता की परिभाषा

राज्य स्वायत्तता से आशय संघीय शासन व्यवस्था के अंतर्गत राज्यों को प्राप्त उस स्वतंत्रता और अधिकार से है, जिसके माध्यम से वे अपने प्रशासनिक, वित्तीय तथा सामाजिक मामलों में स्वयं निर्णय लेने में सक्षम होते हैं। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में राज्य स्वायत्तता का महत्व इसलिए बढ़ जाता है क्योंकि प्रत्येक राज्य की भाषा, संस्कृति, आर्थिक स्थिति और सामाजिक आवश्यकताएँ अलग–अलग होती हैं। भारतीय संविधान में केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का स्पष्ट विभाजन किया गया है, जिसे संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के माध्यम से निर्धारित किया गया है। इस व्यवस्था के अंतर्गत राज्य सरकारों को शिक्षा, कृषि, स्वास्थ्य, स्थानीय प्रशासन और क्षेत्रीय विकास से जुड़े विषयों पर नीतियाँ बनाने का अधिकार प्राप्त होता है। राज्य स्वायत्तता का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि राज्य अपनी स्थानीय समस्याओं और विकास संबंधी आवश्यकताओं के अनुसार प्रभावी नीतियाँ बना सकें। इससे न केवल प्रशासनिक दक्षता बढ़ती है, बल्कि लोकतांत्रिक भागीदारी भी सुदृढ़ होती है और क्षेत्रीय विकास को गति मिलती ळें

## भारतीय संविधान में केंद्र–राज्य संबंध

भारतीय संविधान में केंद्र–राज्य संबंध "राज्यों के संघ" की अवधारणा पर आधारित हैं। इसका अर्थ यह है कि भारत एक संघीय व्यवस्था वाला देश है, लेकिन इसमें केंद्र सरकार को अपेक्षाकृत अधिक शक्तियाँ प्रदान की गई हैं ताकि राष्ट्रीय एकता और प्रशासनिक

2015, RHIMRJ, All Rights Reserved 

स्थिरता बनी रहे। संविधान में केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का स्पष्ट विभाजन किया गया है, जो मुख्यतः विधायी, प्रशासनिक और वित्तीय संबंधों के रूप में दिखाई देता है। संविधान के अनुच्छेद 245 से 293 के अंतर्गत इन संबंधों की रूपरेखा निर्धारित की गई है। संघ सूची में राष्ट्रीय महत्व के विषय जैसे रक्षा, विदेश नीति और मुद्रा शामिल हैं, जिन पर केवल संसद कानून बना सकती है। राज्य सूची में पुलिस, सार्वजनिक व्यवस्था और कृषि जैसे स्थानीय महत्व के विषय होते हैं, जिन पर राज्य सरकारों को कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है। इसके अतिरिक्त समवर्ती सूची में ऐसे विषय शामिल हैं जिन पर केंद्र और राज्य दोनों कानून बना सकते हैं, किंतु किसी विवाद की स्थिति में केंद्र का कानून प्रभावी माना जाता है। इस प्रकार भारतीय संघीय व्यवस्था राष्ट्रीय एकता और क्षेत्रीय स्वायत्तता के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करती है।

## केंद्र–राज्य संबंधों के मुख्य पहलू

### 1. विधायी संबंध (अनुच्छेद 245–255)

विधायी संबंधों का तात्पर्य केंद्र और राज्यों के बीच कानून बनाने की शक्तियों के विभाजन से है। संविधान के अनुसार संसद पूरे देश के लिए कानून बना सकती है, जबकि राज्य विधानसभाएँ केवल अपने राज्य की सीमाओं के भीतर कानून बनाने के लिए अधिकृत होती हैं। सामान्य परिस्थितियों में राज्य सूची के विषयों पर केवल राज्य सरकार ही कानून बना सकती है। हालांकि, राष्ट्रीय हित, आपातकाल या राज्यसभा के विशेष प्रस्ताव की स्थिति में संसद राज्य सूची के विषयों पर भी कानून बना सकती है। इस व्यवस्था का उद्देश्य राष्ट्रीय एकता बनाए रखते हुए प्रशासनिक समन्वय सुनिश्चित करना है।

### 2. प्रशासनिक संबंध (अनुच्छेद 256–263)

प्रशासनिक संबंधों का संबंध केंद्र और राज्यों की कार्यकारी शक्तियों के समन्वय से है। संविधान के अनुसार राज्यों को अपनी कार्यकारी शक्तियों का प्रयोग इस प्रकार करना होता है कि संसद द्वारा बनाए गए कानूनों का पालन हो और केंद्र सरकार के कार्यों में बाधा न उत्पन्न हो। केंद्र सरकार राज्यों को आवश्यक निर्देश जारी कर सकती है ताकि राष्ट्रीय नीतियों का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जा सके। इसके अतिरिक्त अंतर–राज्यीय परिषद जैसी संस्थाएँ केंद्र और राज्यों के बीच सहयोग तथा समन्वय को बढ़ावा देने में सहायक होती हैं।

### 3. वित्तीय संबंध (अनुच्छेद 264–293)

वित्तीय संबंध केंद्र और राज्यों के बीच राजस्व के वितरण से संबंधित हैं। संविधान के अनुसार कराधान की शक्तियों का भी केंद्र और राज्यों के बीच विभाजन किया गया है। केंद्र सरकार आयकर, सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क जैसे प्रमुख करों का संग्रह करती है, जबकि राज्य सरकारें भूमि राजस्व, बिक्री कर और अन्य स्थानीय करों का संग्रह करती हैं। राजस्व के उचित वितरण और वित्तीय संतुलन बनाए रखने के लिए वित्त आयोग की स्थापना की गई है, जो समय–समय पर केंद्र और राज्यों के बीच करों के बंटवारे की सिफारिश करता है।

## संबंधों की प्रकृति

भारतीय संघीय व्यवस्था में सहकारी संघवाद की भावना को महत्व दिया गया है, जिसमें केंद्र और राज्य दोनों मिलकर राष्ट्रीय विकास के लिए कार्य करते हैं। फिर भी कई बार राजनीतिक मतभेदों के कारण केंद्र–राज्य संबंधों में तनाव भी उत्पन्न हो सकता है। उदाहरण के लिए राज्यपाल की भूमिका, अनुच्छेद 356 के अंतर्गत राष्ट्रपति शासन का प्रयोग और नीति संबंधी विवाद ऐसे मुद्दे हैं जिनसे कभी–कभी टकराव की स्थिति उत्पन्न होती है।

## सुधार हेतु आयोग

केंद्र–राज्य संबंधों को अधिक संतुलित और प्रभावी बनाने के लिए समय–समय पर विभिन्न आयोगों का गठन किया गया है। सरकारिया आयोग (1983) और पुंछी आयोग (2007) ने केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों के संतुलन को मजबूत करने, सहकारी संघवाद को बढ़ावा देने और राज्यों की स्वायत्तता को सुरक्षित रखने के लिए महत्वपूर्ण सिफारिशें प्रस्तुत कीं। इन आयोगों का उद्देश्य भारतीय संघीय व्यवस्था को अधिक प्रभावी, संतुलित और लोकतांत्रिक बनाना रहा है।

*2015, RHIMRJ, All Rights Reserved*

*ISSN:* 2349-7637 (Online)

## भारत में केंद्र–राज्य संबंधों के अंतर्गत राज्य स्वायत्तता के सामने चुनौतियाँ

भारत एक संघीय व्यवस्था वाला देश है, जहाँ केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन संविधान द्वारा निर्धारित किया गया है। यद्यपि संविधान में राज्यों को कई प्रशासनिक और विधायी अधिकार प्रदान किए गए हैं, फिर भी व्यवहारिक स्तर पर राज्य स्वायत्तता के सामने कई चुनौतियाँ उत्पन्न होती रही हैं। भारतीय संविधान की संरचना एक मजबूत केंद्र की अवधारणा पर आधारित है, जिसके कारण कई बार राज्यों की स्वतंत्र नीति–निर्माण क्षमता सीमित हो जाती है। वर्तमान समय में आर्थिक नीतियों, प्रशासनिक नियंत्रण और राजनीतिक हस्तक्षेप से जुड़े कई मुद्दे राज्य स्वायत्तता को प्रभावित करते हैं। विशेष रूप से राजकोषीय निर्भरता, राज्यपाल की भूमिका, अनुच्छेद 356 का प्रयोग, केंद्रीय एजेंसियों का हस्तक्षेप, अखिल भारतीय सेवाओं का नियंत्रण तथा योजनाओं का केंद्रीकरण जैसे कारक राज्यों की स्वायत्तता के सामने प्रमुख चुनौतियाँ बनकर उभरे हैं। इन परिस्थितियों के कारण कई बार केंद्र और राज्यों के बीच तनाव की स्थिति उत्पन्न होती है और संघीय संतुलन प्रभावित होता है।

## राज्य स्वायत्तता के सामने प्रमुख चुनौतियाँ

**1. राजकोषीय निर्भरता–** राजकोषीय संघवाद किसी भी संघीय व्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार होता है। भारत में राज्यों की वित्तीय स्वायत्तता समय के साथ सीमित होती दिखाई देती है। वस्तु एवं सेवा कर लागू होने के बाद राज्यों की कई स्वतंत्र कराधान शक्तियाँ समाप्त हो गईं और उन्हें साझा कर व्यवस्था पर निर्भर होना पड़ा। यद्यपि जीएसटी परिषद राज्यों और केंद्र के बीच समन्वय स्थापित करने का मंच प्रदान करती है, फिर भी राज्यों को अपने राजस्व के लिए केंद्र से मिलने वाले अनुदानों और हिस्सेदारी पर अधिक निर्भर रहना पड़ता है। इससे राज्यों की आर्थिक स्वतंत्रता प्रभावित होती है और कई बार विकास योजनाओं के लिए केंद्र की स्वीकृति आवश्यक हो जाती है।

**2. राज्यपाल की भूमिका–** भारतीय संविधान के अनुसार राज्यपाल राज्य का संवैधानिक प्रमुख होता है और उसकी नियुक्ति केंद्र सरकार द्वारा की जाती है। व्यवहार में कई बार यह आरोप लगाया जाता है कि राज्यपाल केंद्र के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते हैं और राज्य सरकारों के निर्णयों में हस्तक्षेप करते हैं। विशेष रूप से विपक्षी दलों की सरकार वाले राज्यों में विधेयकों को स्वीकृति देने में देरी, विधानसभा सत्र बुलाने के विवाद या सरकार गठन से जुड़े मामलों में राज्यपाल की भूमिका विवाद का विषय बन जाती है। इस कारण राज्य स्वायत्तता और लोकतांत्रिक प्रक्रिया प्रभावित होने की आशंका व्यक्त की जाती है।

**3. अनुच्छेद 356 का दुरुपयोग–** भारतीय संविधान का अनुच्छेद 356 राष्ट्रपति शासन लागू करने का प्रावधान देता है, जिसका उपयोग तब किया जाता है जब किसी राज्य में संवैधानिक तंत्र विफल हो जाता है। हालांकि अतीत में कई बार इस प्रावधान का राजनीतिक कारणों से उपयोग किया गया, जिससे राज्य सरकारों को बर्खास्त कर दिया गया। इससे राज्यों की स्वायत्तता और लोकतांत्रिक व्यवस्था पर प्रश्न उठे। बाद में सर्वोच्च न्यायालय के एस.आर. बोम्मई मामले (1994) में इस प्रावधान के प्रयोग पर कई संवैधानिक सीमाएँ निर्धारित की गईं, जिससे इसके दुरुपयोग को काफी हद तक नियंत्रित किया गया।

**4. केंद्रीय सूची का विस्तार और हस्तक्षेप–** संविधान में केंद्र और राज्यों के विषयों का विभाजन किया गया है, लेकिन कई बार केंद्र सरकार समवर्ती सूची या अन्य संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से ऐसे क्षेत्रों में भी हस्तक्षेप करती है जो पारंपरिक रूप से राज्यों के अधिकार क्षेत्र में माने जाते हैं। उदाहरण के लिए शिक्षा, कृषि या श्रम जैसे विषयों पर केंद्र द्वारा नीतियाँ और कानून बनाए जाने से राज्यों की नीति–निर्माण क्षमता प्रभावित हो सकती है। इससे संघीय संतुलन को लेकर बहस भी सामने आती है।

**5. केंद्रीय जांच एजेंसियों का उपयोग–** कई राज्यों ने यह आरोप लगाया है कि केंद्रीय जांच एजेंसियों जैसे सीबीआई और प्रवर्तन निदेशालय का उपयोग राजनीतिक उद्देश्यों के लिए किया जाता है। जब इन एजेंसियों द्वारा राज्य के राजनीतिक नेताओं या अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई की जाती है, तो इससे केंद्र और राज्य सरकारों के बीच तनाव उत्पन्न हो सकता है। कुछ राज्यों ने तो सीबीआई को सामान्य सहमति देने से भी इनकार कर दिया है।

**6. अखिल भारतीय सेवाएँ –** भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा जैसी अखिल भारतीय सेवाओं के अधिकारी राज्यों में कार्यरत होते हुए भी उनके कैडर प्रबंधन और नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण हिस्सा केंद्र सरकार के पास रहता है। कई बार राज्यों को यह महसूस होता है कि इन अधिकारियों के स्थानांतरण, प्रतिनियुक्ति या नियुक्ति संबंधी निर्णयों में उनकी भूमिका सीमित होती है। इससे राज्य सरकारों की प्रशासनिक स्वतंत्रता प्रभावित हो सकती है।

**7. योजनाओं का केंद्रीकरण–** केंद्र सरकार द्वारा चलाई जाने वाली कई राष्ट्रीय योजनाएँ राज्यों में लागू की जाती हैं। हालांकि इन योजनाओं का उद्देश्य राष्ट्रीय विकास को गति देना होता है, लेकिन कई बार राज्यों को लगता है कि इन योजनाओं में स्थानीय

आवश्यकताओं के अनुसार लचीलापन नहीं होता। परिणामस्वरूप राज्यों की अपनी विकास प्राथमिकताओं को लागू करने में कठिनाई हो सकती है।

## केंद्र–राज्य संबंधों के संदर्भ में राज्य स्वायत्तता की संभावनाएँ

भारत एक संघीय लोकतांत्रिक देश है, जहाँ केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन संविधान द्वारा निर्धारित किया गया है। भारतीय संघीय व्यवस्था में केंद्र को अपेक्षाकृत अधिक शक्तियाँ प्रदान की गई हैं, ताकि राष्ट्रीय एकता और प्रशासनिक समन्वय बनाए रखा जा सके। फिर भी बदलते राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक परिवेश में राज्य स्वायत्तता की आवश्यकता और उसकी संभावनाएँ लगातार बढ़ती जा रही हैं। राज्य स्वायत्तता का अर्थ है कि राज्यों को अपने प्रशासनिक, वित्तीय और नीतिगत मामलों में पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त हो, ताकि वे स्थानीय आवश्यकताओं और क्षेत्रीय परिस्थितियों के अनुसार विकास नीतियाँ बना सकें। केंद्र–राज्य संबंधों के संदर्भ में राज्य स्वायत्तता को मजबूत करने की कई संभावनाएँ दिखाई देती हैं।

## राज्य स्वायत्तता की प्रमुख संभावनाएँ

**1. सहकारी संघवाद को मजबूत करना–** सहकारी संघवाद के अंतर्गत केंद्र और राज्य सरकारें आपसी सहयोग, संवाद और समन्वय के आधार पर कार्य करती हैं। इस व्यवस्था में नीतियों के निर्माण और क्रियान्वयन में राज्यों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जाती है। नीति आयोग, अंतर–राज्यीय परिषद और जीएसटी परिषद जैसी संस्थाएँ केंद्र और राज्यों के बीच सहयोग को बढ़ाने का कार्य करती हैं। इन संस्थाओं के माध्यम से राज्यों को अपनी आवश्यकताओं और सुझावों को राष्ट्रीय नीति निर्माण में शामिल करने का अवसर मिलता है, जिससे उनकी स्वायत्तता मजबूत होती है।

**2. राजकोषीय संघवाद का सुदृढ़ीकरण–** राज्यों की स्वायत्तता के लिए आर्थिक संसाधनों पर उनका पर्याप्त नियंत्रण आवश्यक है। वित्त आयोग की सिफारिशों के माध्यम से राज्यों को केंद्रीय करों में हिस्सा प्रदान किया जाता है। यदि राज्यों को अधिक वित्तीय संसाधन और कराधान की स्वतंत्रता मिले, तो वे अपनी विकास योजनाओं को अधिक प्रभावी ढंग से लागू कर सकते हैं। राजकोषीय संघवाद को मजबूत करने से राज्यों की आर्थिक निर्भरता कम होगी और उनकी स्वायत्तता बढ़ेगी।

**3. विकेंद्रीकरण और स्थानीय शासन को बढ़ावा–** राज्य स्वायत्तता को मजबूत करने के लिए प्रशासनिक विकेंद्रीकरण अत्यंत आवश्यक है। पंचायती राज संस्थाओं और नगर निकायों के माध्यम से स्थानीय स्तर पर शासन को सशक्त किया जा सकता है। जब राज्यों को स्थानीय प्रशासन और विकास योजनाओं के क्रियान्वयन में अधिक अधिकार मिलते हैं, तो वे अपने क्षेत्र की आवश्यकताओं के अनुसार निर्णय ले सकते हैं। इससे लोकतांत्रिक भागीदारी भी बढ़ती है।

**4. क्षेत्रीय दलों की बढ़ती भूमिका–** भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों की भूमिका लगातार बढ़ रही है। ये दल अपने–अपने राज्यों के हितों और क्षेत्रीय मुद्दों को राष्ट्रीय स्तर पर उठाते हैं। गठबंधन सरकारों के दौर में क्षेत्रीय दलों की भागीदारी से केंद्र को राज्यों की मांगों और आवश्यकताओं को अधिक महत्व देना पड़ता है। इससे राज्य स्वायत्तता की संभावनाएँ मजबूत होती हैं और संघीय राजनीति अधिक संतुलित बनती है।

**5. अंतर–राज्यीय परिषद और संवाद तंत्र का विकास–** केंद्र और राज्यों के बीच संवाद और सहयोग को बढ़ाने के लिए अंतर–राज्यीय परिषद जैसी संस्थाओं का महत्व बहुत अधिक है। इन मंचों के माध्यम से विभिन्न राज्यों की समस्याओं, नीतिगत मतभेदों और विकास संबंधी मुद्दों पर चर्चा की जा सकती है। इससे विवादों का समाधान शांतिपूर्ण और संवैधानिक तरीके से संभव होता है तथा राज्यों को अपनी बात रखने का अवसर मिलता है।

**6. संवैधानिक और प्रशासनिक सुधार–** समय–समय पर विभिन्न आयोगों जैसे सरकारिया आयोग और पुंछी आयोग ने केंद्रदृराज्य संबंधों को अधिक संतुलित बनाने के लिए कई सिफारिशें की हैं। इन सिफारिशों को लागू करने से राज्यों की विधायी और प्रशासनिक स्वायत्तता को मजबूत किया जा सकता है। साथ ही राज्यपाल की भूमिका को अधिक निष्पक्ष और सीमित बनाने से भी राज्यों के अधिकारों की रक्षा हो सकती है।

**7. प्रतिस्पर्धी संघवाद–** वर्तमान समय में प्रतिस्पर्धी संघवाद की अवधारणा भी राज्य स्वायत्तता को बढ़ावा देती है। इसके अंतर्गत विभिन्न राज्य आर्थिक विकास, निवेश आकर्षित करने और प्रशासनिक सुधारों में एक–दूसरे से प्रतिस्पर्धा करते हैं। इससे राज्यों को अपनी नीतियों में नवाचार करने और विकास की गति बढ़ाने के अवसर मिलते हैं।

*2015, RHIMRJ, All Rights Reserved*

*ISSN:* 2349-7637 (Online)

## निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारत की संघीय व्यवस्था में केंद्र–राज्य संबंध राष्ट्रीय एकता और क्षेत्रीय स्वायत्तता के बीच संतुलन बनाए रखने का महत्वपूर्ण आधार हैं। संविधान ने राज्यों को कई प्रशासनिक, विधायी और वित्तीय अधिकार प्रदान किए हैं, किंतु व्यवहार में विभिन्न राजनीतिक, आर्थिक और प्रशासनिक कारणों से राज्य स्वायत्तता कई चुनौतियों का सामना करती है। राजकोषीय निर्भरता, राज्यपाल की भूमिका, केंद्रीय एजेंसियों का हस्तक्षेप और योजनाओं का केंद्रीकरण जैसे मुद्दे संघीय संतुलन को प्रभावित कर सकते हैं। इसके बावजूद सहकारी और प्रतिस्पर्धी संघवाद, अंतर–राज्यीय परिषद, वित्त आयोग की सिफारिशें तथा क्षेत्रीय दलों की बढ़ती भूमिका राज्यों की स्वायत्तता को सुदृढ़ करने की दिशा में सकारात्मक संभावनाएँ प्रस्तुत करती हैं। अतः आवश्यक है कि केंद्र और राज्य सहयोग, संवाद और संवैधानिक मूल्यों के आधार पर कार्य करें, जिससे भारतीय संघीय व्यवस्था अधिक संतुलित, लोकतांत्रिक और प्रभावी बन सके।

## सदर्भ–ग्रन्थ सुची

1. महाजन गुरप्रीत (2007), "भारत में केंद्र–राज्य संबंधों का पुनर्गठन", द फोरम ऑफ़ फेडरेशन्स, अक्टूबर–नवंबर, 2007.
2. जैन सुमित्रा कुमार (1993), भारत में दलीय राजनीति और केंद्र–राज्य संबंध, अभिनव पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली.
3. सेठी, जे.डी., "संघ–राज्य संबंधकृशक्ति संतुलन दृष्टिकोण", 'द यूनियन एंड द स्टेट' (संपा.), जैन, कश्यप, श्रीनिवासन, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1972, पृ. 92.
4. अशोक चंद्र, भारत में संघवादः संघ–राज्य संबंधों का एक अध्ययन, लंदनरू जॉर्ज एलन एंड अनविन लिमिटेड, 1965, पृ. 127.
5. पाल, आर. एम. (2000). भारत में राज्य स्वायत्तता का प्रश्नः केंद्र–राज्य संबंधों का एक अध्ययन। राधा पब्लिकेशन्स.
6. पुंछी आयोग। (2010)। केंद्र–राज्य संबंधों पर आयोग की रिपोर्ट (खंड 1–3)। भारत सरकार।
7. सरकारिया आयोग। (1988)। केंद्र–राज्य संबंधों पर आयोग की रिपोर्ट (भाग 1 और 2)। भारत सरकार, गृह मंत्रालय।
8. शर्मा, बी. के. (2007). भारत में संघवाद और राज्य स्वायत्तता। रॉयल पब्लिशर्स.
9. सिंह, एम. पी., – वर्मा, एच. एस. (सं.). (2011). भारत में केंद्र–राज्य संबंध और संघीय राजनीति (द्वितीय संस्करण)। स्टर्लिंग पब्लिशर्स.

*2015, RHIMRJ, All Rights Reserved*

*ISSN:* 2349-7637 (Online)